ओ३म्

प्रार्थनावली

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय
हरिद्वार।

निवेदन

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय में दैनिक अध्ययन आरम्भ करने से पूर्व, जिन वेदमन्त्रों और गीतियों से प्रभु-वन्दना की जाती है, उनका संग्रह इस प्रार्थनावली में सर्वसाधारण जनता के लाभ के लिए प्रस्तुत किया जा रहा है। आशा है यह विनयाञ्जलि अन्य गुरुकुलों, विद्यालयों, कन्या पाठशालाओं, आश्रमों व अन्य शिक्षण-संस्थाओं के लिए भी उपयोगी सिद्ध होगी। आर्य-समाज के साप्ताहिक सत्सङ्गों के लिये तो यह विशेष रूप से उपयोगी होगी।

वन्दना के लिए प्रार्थना-भवन में उपस्थित होने के अनन्तर सर्वप्रथम संग्रह में दिये हुये मन्त्रगुच्छकों में से किसी एक मन्त्रगुच्छ का पाठ करना चाहिये। तत्पश्चात् किसी एक गीतिका भक्ति-पूर्वक सामूहिक-गान किया जाना चाहिये। संस्कृत भाषासे अनभिज्ञ उपासकोंके लिए वेदमन्त्रों के सरल भावार्थ भी दे दिये गये हैं। सामूहिक मन्त्र-पाठ के अनन्तर किसी व्यक्ति द्वारा सरल मन्त्रार्थ का वाचन कराना उपयोगी होगा।

१-८-६७ ——मुख्याधिष्ठाता

★

ओ३म्

प्रार्थनावली

मन्त्रगुच्छ—१

ओं, सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात् ।
स भूमिं सर्वत स्पृत्वात्यतिष्ठद्दशाङ्गुलम् ।।
—यजु. ३१. १ ।

आ ब्रह्मन् ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायताम् । आ राष्ट्रे राजन्यः शूर इषव्योऽतिव्याधी महारथो जायताम् । दोग्ध्री धेनु र्वोढाऽनड्वानाशुः सप्तिः पुरन्धिर्योषा जिष्णू-रथेष्ठाः सभेयो युवास्य यजमानस्य वीरो जायताम् । निकामे निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु फलवत्यो न ओषधयः पच्यन्तां योगक्षेमो नः कल्पताम् ।
—यजु. २२. २२ ।

स पर्य्यगाच्छुक्रमकायमव्रण-
मस्नाविरꣳ शुद्धमपापविद्धम् ।
कविर्मनीषी परिभूः स्वयम्भू-
र्याथातथ्यतोऽर्थान् व्यदधा-
च्छाश्वतीभ्यः समाभ्यः ।।
—यजु. ४०. ८ ।

सरल अर्थ

प्रभु में सहस्रों सिरों की शक्ति है, सहस्रों आंखों की शक्ति है, सहस्रों पैरों की शक्ति है। वह भूमि पर चारों तरफ़ व्यापक है, वह दसों इन्द्रियों में से किसी से भी गृहीत नहीं हो सकता।

हे प्रभो! ऐसी कृपा करो कि हमारे राष्ट्र में ब्रह्मवर्चसी ब्राह्मण हों, शूरवीर, धनुर्धारी, नीरोग, महारथी क्षत्रिय हों; दुधार गौएं हों; भारवाही बैल हों; शीघ्रगामी घोड़े हों, गृहकार्यों में कुशल गृह देवियां हों, जयशील रथारोही योद्धा हों, सभ्य युवा वीर पुत्र पैदा हों; इच्छानुसार बादल बरसे; औषधियां फल-फूलों से लदी रहें, हमें पूर्ण योगक्षेम प्राप्त हो।

प्रभु सर्वव्यापी, तेजोमय, शरीर-रहित, व्रण-रहित, स्नायु-रहित, शुद्ध और पाप रहित है। वह कवि, मनीषी, परिभू और स्वयम्भू है और वह सनातनकाल से जैसे उचित है वैसी ही पदार्थों की रचना करता आया है।

मन्त्रगुच्छ — २

ओं येनस्तत्पश्यन्निहितं गुहा सद्-
यत्र विश्वं भवत्येकनीडम् ।
तस्मिन्निदम् सञ्च वि चैति सर्वम्
स ओतः प्रोतश्च विभूः प्रजासु ।।
यजु. ३२. ८ ।

यद् ग्रामे यदरण्ये यत्सभायां यदिन्द्रिये ।
यच्छूद्रे यदर्ये, यदेनश्चकृमा वयं,
यदेकस्याधि धर्मणि तस्यावयजनमसि ।।
—यजु. २०. १७ ।

संजानामहै मनसा संचिकित्वा,
मा युष्महि मनसा दैव्येन ।
मा घोषा उत्स्थुर्बहुले विनिर्हते,
मेषुः पप्तदिन्द्रस्याऽहन्यागते ।।
—अथर्व ७. ५२ २ ।

दृते दृꣳह मा मित्रस्य मा चक्षुषा
सर्वाणि भूतानि समीक्षन्ताम् ।
मित्रस्याहं चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे ।
मित्रस्य चक्षुसा समीक्षामहे ।।
दृते दृꣳह मा ज्योक्ते । संदृशि जीव्यासं ।।
—यजु. ३६. १८ १९ ।

सरल अर्थ

प्रभु अत्यन्त गुह्य है, मेधावान् को ही उसके दर्शन होते हैं। वह जगदाधार हैं। उसमें यह सकल विश्व समाविष्ट है और उसी से निकला है। वह विभु है और सब प्रजाओं के अन्दर ओतप्रोत है।

ग्राम में, अरण्य में, सभा में, इन्द्रियों के प्रति, शूद्र के प्रति, वैश्य के प्रति जो कोई पाप हमने किया है, उस पापाचरण को हे प्रभो! तुम हम से दूर करने वाले हो।

हम मन में परस्पर प्रीतिभाव रखें। दिव्य मन से हम पृथक् न हों। हमारे समाज में विपुल संहार व हाहाकार न मचे। इन्द्र का वज्र हम पर न गिरे।

हे दृढ़ता के देव! मुझे दृढ़ता प्रदान करो। सब प्राणी मुझे मित्र की दृष्टि से देखें, मैं भी सब प्राणियों को मित्र की दृष्टि से देखूं, इस प्रकार हम सब एक-दूसरे को मित्र की दृष्टि से देखा करें। हे दृढ़ता के देव! मुझे दृढ़ता प्रदान करो। आप के दर्शन में मैं चिरकाल तक जीवित रहूं।

मन्त्रगुच्छ—३

ओं। प्रियं मा कृणु देवेषु प्रियं राजसु मा कृणु।
प्रियं सर्वस्य पश्यत, उत शूद्रे उताऽर्ये॥
—अथर्व. १९. ६२. १।

उत्तिष्ठ ब्रह्मणस्पते देवान् यज्ञेन बोधय।
आयुः प्राणं प्रजां पशून् कीर्त्तिं यजमानं च वर्धय॥
—अथर्व. १९. ६. ३. १।

भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः।
स्थिरैरंगैस्तुष्टुवांꣳसस्तनूभिर्व्यशेम देवहितं यदायुः।
—ऋग्. १. ८९. ८।

देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयतां,
देवानां रातिरभि नो नि वर्त्तताम्।
देवानां सख्यमुप सेदिमा वयं,
देवा न आयुः प्रतिरन्तु जीवसे॥
—ऋग्. ८९. २।

ये नः सपत्ना अप ते भव-
न्त्विन्द्राग्निभ्यामवबाधामहे तान्।
वसवो रुद्रा आदित्या उपरिस्पृशं
मोग्रं चेत्तारमधिराजमक्रन्॥
—यजु. ३४. ४६।

सरल अर्थ

हे परमेश्वर! मुझे ब्राह्मणों का प्यारा बना, क्षत्रियों का प्यारा बना, सब देखने वालों का प्यारा बना, शूद्र, वैश्य सबका प्यारा बना ।

हे जगत्पति प्रभो ! मेरे अन्दर उदित हों, यज्ञ द्वारा देव भावों को जागृत करें। मुझ यजमान की आयु, प्राण, प्रजा, पशु तथा कीर्ति को बढ़ावें और इस प्रकार मेरी सर्वतोमुखी वृद्धि करें ।

हे देवो ! कानों से हम भद्र ही श्रवण करें, आंखों से भद्र दृश्य ही देखें । हृष्ट-पुष्ट अङ्गों से युक्त होकर प्रभु का स्तुति-पूजन करते हुए हम देवजनों के हित में अर्पित होने वाली पूर्ण आयु प्राप्त करें ।

सरल मार्ग पर चलने वाले देवों की सुमति और दान हमें प्राप्त हो । हम देवों की मैत्री में बैठें, देव ! सुखी जीवन के लिये हमारी आयु को प्रवृद्ध करें ।

जो हमसे शत्रुता करने वाले हैं वे दूर हो जायें; 'इन्द्र' और 'अग्नि' की सहायता से हम उन्हें दूर कर दें । 'वसु', 'रुद्र' और आदित्यों की कृपा से मैं सर्वोच्च, उग्र जागृत और अधिराज जाऊं ।

मन्त्रगुच्छ—४

ओं अग्ने नय सुपथा राये अस्मान्-
विश्वानि देव वयुनानि विद्वान् ।
युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो
भूयिष्ठांते नमउक्तिं विधेम ।।
—ऋग्. १८९. १ ।

अग्ने अच्छा वदेह नः प्रत्यङ्नः सुमना भव ।
प्र नो यच्छ विशस्पते धनदा असि नस्त्वम् ।।
—ऋग्. १०. १४१. १ ।

उदुत्तमं वरुण ! पाशमस्मदवाधमं वि मध्यमं श्रथाय ।
अथावयमादित्य व्रते तवानागसो अदितये स्याम ।।
—ऋग्. १. २४. १५ ।

संवर्चसा पयसा सन्तनूभिरगन्महि मनसा सम् शिवेन ।
त्वष्टा सुदत्रो विदधातु रायोऽनमार्ष्टु तन्वो यद्विलिष्टम् ।।
—यजु. २. २४ ।

सरल अर्थ

हे प्रभो ! ऐश्वर्य के लिए हमें सुपथ से ले चलो । हे देव ! तुम हमारे समस्त विचारों को जानने वाले हो । कुटिलता की ओर ले जाने वाले पाप को हम से दूर कर दो; हम तुम्हें बार बार नमस्कार करते हैं ।

हे परमेश्वर ! हमसे अनुकूलता रखते हुए तुम हमें उचित उपदेश करते रहो, हमारे प्रति तुम सुमना होवो । हे बृहस्पते ! तुम धनदा हो, हमें भी धन प्रदान करो ।

हे वरुण ! तुम हमारे उत्तम, मध्यम, अधम सब पाशों को काट दो, तत्पश्चात्, हे आदित्य प्रभो! तुम्हारे नियमों के अनुसार आचरण करते हुए निष्पाप होकर हम मोक्ष के अधिकारी हो जायें ।

हम वर्चस्वी हों, यशस्वी हों, शारीरिक शक्तियों से समन्वित हों, मन हमारा शुभ हो । कल्याण देने वाला 'त्वष्टा' प्रभु हमें ऐश्वर्य प्रदान करे और हमारे शरीर का जो दोष है उसे मांज कर हमें निर्मल कर दे ।

मन्त्रगुच्छ— ५

ओं विश्वानि देव ! सवितर्दुरितानि परासुव ।
यद् भद्रं तन्न आसुव ।।

—ऋग्. ५.८२.५ ।

यो जात एव प्रथमो मनस्वान्
देवो देवान् क्रतुना पर्यभूषत ।
यस्य शुष्माद् रोदसी अभ्यसेतां
नृम्णस्य मह्ना सजनास इन्द्रः ।।

—ऋग्. २.१२.१ ।

शन्नो देवा विश्वदेवा भवन्तु
शं सरस्वती सहधीभिरस्तु ।
शमभिषाचः शमु रातिषाचः
शं नो दिव्याः पार्थिवाः शन्नो अप्याः ।।

ऋग्. ७. ३५. ११ ।

शन्नो धाता शमु धर्त्ता नो अस्तु
शन्न उरूची भवतु स्वधाभिः ।
शं रोदसी बृहती शन्नो अद्रिः
शन्नो देवानां सुहवानि सन्तु ।।

—ऋग्. ७. ३५. ३ ।

सरल अर्थ

हे देव ! हे सवितः ! हमारे सब दुर्गुणों को दूर कर और हमें सद्गुण प्रदान कर ।

जो प्रथम से ही विद्यमान् और ज्ञानस्वरूप है, जिस देव ने प्रत्येक दिव्य वस्तु को अपनी ज्योति से अलंकृत किया है, और जो ऐसा बली है कि उसके बल से आकाश भूतल कांप उठते हैं, हे मनुष्यो वह प्रभु है ।

सबके स्तुति-पात्र देव हमारे लिए सुखकारी हों, वेद माता सरस्वती अपने अन्दर निहित ज्ञानों द्वारा हमारे लिए सुखकारिणी हों; चारों ओर विद्यमान, अपनी दानवर्षा करने वाली सब आकाशीय, पार्थिव और जलीय वस्तुयें हमारे लिए सुखकारिणी हों ।

'धाता' प्रभु हमारे लिए सुखकारी हो, 'धर्ता' प्रभु सुखकारी हो । व्यापक गति वाली अन्नों सहित हमारे लिए सुखकारिणी हो, विशाल द्यावा-पृथिवी और पर्वत हमारे लिए सुखकारी हों, देवों के श्रेष्ठ आह्वान हमारे लिए सुखकारी हों, देवों के श्रेष्ठ आह्वान हमारे लिये सुखकारी हों ।

मन्त्रगुच्छ—६

ओं वेदाहमेतं पुरुषं महान्तमादित्यवर्ण तमसः परस्तात् ।
तमेव विदित्वाऽतिमृत्युमेति नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय ।।
—यजु. ३१. १८ ।

यन्मे छिद्रं चक्षुषो हृदयस्य मनसो वातितृण्णं बृहस्पतिर्मे ।
तद् दधातु । शं नो भवतु भुवनस्य यस्पतिः ।।
—यजु. ३६. २ ।

यां मेधां देवगणाः पितरश्चोपासते ।
तया मामद्य मेधयाऽग्ने मेधाविनं कुरु स्वाहा ।।
—यजु ३२. १४ ।

इंद्र मे ब्रह्म च क्षत्रं चोभे श्रियमश्नुताम् ।
मयि देवा दधतु श्रियमुत्तमां, तस्यै ते स्वाहा ।।
—यजु. ३२. १६ ।

रुचं नो धेहि ब्राह्मणेषु रुचं राजसु नस्कृधि ।
रुचं विश्येषु शूद्रेषु मयि धेहि रुचा रुचम् ।।
—यजु. १८. ४८ ।

सरल अर्थ

मैंने जान लिया है--प्रभु बड़ा ही महान् है, सूर्यवत् प्रकाशमान है, अन्धकार से परे है। उसी को जानकर मनुष्य मृत्यु को तर सकता है, मृत्यु को तरने के लिए और कोई मार्ग नहीं है।

मेरे आंख हृदय, मन आदि का जो भी बहुत बड़ा दोष है उसे 'बृहस्पति' प्रभु दूर कर दें। 'भुवनपति' प्रभु सब प्रकार से मेरे लिए सुखकारी हों।

जिस मेधा की बड़े-बड़े देवजन और पितृजन उपासना करते हैं, वह मेधा देकर हे प्रभो! आप मुझे मेधावी बनाइये।

मेरे अन्दर ब्रह्मबल और छात्रबल दोनों शोभा को प्राप्त हों। दिव्यगुण मेरे अन्दर अपूर्व शोभा को ला दें, हे शोभे! तेरा स्वागत है!

हे प्रभो! हमारे देश के ब्राह्मणों में कान्ति ला, मुझ स्तोता को भी कान्ति प्रदान कर।

प्रार्थना गीत—१

जयति जयति जगतजननि ! सकलकलुषहारिणी ।।

तू दयामयी निकाम, पतितपावनी सुनाम ।
हो सदा तुझे प्रणाम, प्रेमपुण्यभारिणी ।।

मातु हम अबोध बाल, तू कृपालु सर्व काल ।
काट शीघ्र मोह जाल, दुःखदोषदारिणी ।।

हम अशक्त, शक्तिदान, दे कि व्रत धरें महान ।
हों स्वदेशभक्तिमान, देवि ! शक्तिधारिणी ।।

हम अमृत पुत्रवीर, हों कभी नहीं अधीर ।
धर्महित तजें शरीर, भक्तभयनिवारिणी ।।

भारती प्रसून वन, शान्ति का बने सदन ।
वेद-सूर्य की किरन, हों प्रकाशकारिणी ।।

भेदभाव जायें भूल, सीस लेंहि चरणधूल ।
तू रहे सदानुकूल, हृदयवरविहारिणी ।।

—वागीश्वर विद्यालंकार ।

प्रार्थना गीत — २

हे प्रेममय प्रभो ! तुम्हीं सब के आधार हो ।
तुम को परमपिता प्रणाम बार-बार हो ।।

ऐसी कृपा करो कि हम सब धर्मवीर हों ।
वैदिक पवित्र धर्म का जग में प्रचार हो ।।

सन्देश देश-देश में वेदों का दें सुना ।
समभाव और प्रेम का सब में प्रसार हो ।।

असहाय के सहाय हों उपकार हम करें ।
अभिमान से बचें, हृदय निर्भय उदार हो ।।

फूले फले संसार में यह रम्य वाटिका ।
कर्त्तव्य का अपने सदा हमको विचार हो ।।

स्वाधीनता के मन्त्र का जप हम सदा करें ।
सेवा में मातृभूमि की तन मन निसार हो ।।

—वागीश्वर विद्यालंकार ।

प्रार्थना गीत--३

हे आनन्दघन ! चहुं ओर,
सुख की वर्षा करो ।
पाप ताप सब दूर नसावो,
फेरि कृपा दृगकोर । सुख०

दूर करो शुभ द्युति से अपनी,
मोह तिमिर घनघोर । सुख०

वेद-सुधा-रस पान करें हम,
प्रमुदित हों मन मोर । सुख०

सुरभित शीतल पुण्य पवन हो,
उपवन छवि चितचोर । सुख०

व्रतपति! व्रत हम ब्रह्मचर्य का,
पाल सकें सुकठोर । सुख०

मातृभूमि सुख सम्पत्ति साजे,
विनति यही करजोर । सुख०

—वागीश्वर विद्यालंकार ।

प्रार्थना गीत—४

अब तो नाथ कीजिये । हमको चरण सुधा अधिकारी ।।

अशरणशरण ! तरुणकरुणाघन ! बरसे अमृतवारी ।
होंय निराश नहीं हम चातक, मिटे व्यथा यह सारी ।।

तुम हो दीनबन्धु करुणागर, भवनागर भयहारी ।
अपनी अटल भक्ति का वर दो प्रभो ! भक्तहितकारी ।।

तुमको घट-घट में पहिचानें, लखि लीला विस्तारी ।
धर्म-मार्ग पर सदा रहें दृढ़, जीवें पर-उपकारी ।।

भक्तिकुसुम ले मनमन्दिर में, पूजा करें तुम्हारी ।
स्नेहदीप की द्युति अति उज्ज्वल, हरे हृदय-अंधियारी ।।

—वागीश्वर विद्यालंकार ।

प्रार्थना गीत— ५

तुम प्रभु प्रेम भिखारी ।।

जिन के पग पर लक्ष्मी लोटे,
सो याचक वलिहारी ।
द्वार-द्वार पर अलक पुकारे,
लख न सके संसारी ।। तुम प्रभु····

भांति-भांति के कौतुक रच कर,
बैठा खोल पिटारी ।
दर्शक-हृदय मुग्ध लीला पर,
मांगे भीख मदारी ।। तुम प्रभु····

जिनकी सुध खो लोक-लोक में,
ढूंढ-ढूंढ मति हारी ।
वे प्रभु आंचल गहे भिक्षु बन,
वारी मति मतवारी।।तुम प्रभु····

—चम्पति ।

प्रार्थना गीत—६

प्रभु गुण निशि दिन गाऊं—तर जाऊं मैं।

प्रभु के मधुमय ओम् नाम की,
मन में धूनी रमाऊं।। तर जाऊं मैं।

प्रेम-कुसुम-मंजुल अंजलि मैं,
ले चरणन में आऊं।
भक्ति-भाव का अंजन मल कर,
पिय के दर्शन पाऊं।। तर जाऊं मैं।

गुरुकुल-कमल लसे प्रभु-बल से,
अलि बन मैं रस खाऊं।
ईश-दया से सब दुःख बिनसे,
शांति-सरोवर न्हाऊं।। तर जाऊं मैं।

—इन्द्र विद्यावाचस्पति।

प्रार्थना गीत—७

यह उलझन किस विध सुलझाऊं ?

सब जग पूछे पिता कौन है, कैसे नाम बताऊं ? ।
नाम लिये बिन काम चले ना, नाम लेत सकुचाऊं ।।

ज्योति-रूप है नाम तुम्हारा, दरपन जो लख पाऊं ।
कारि स्वरूप देख अपने को, आंचल में छिप जाऊं ।।

विश्व चराचर के तुम स्वामी, तुमरी थाह न पाऊं ।
मैं अधिपति हूं पाप पुन्ज का, कैसे लाज लगाऊं ? ।।

द्यावा-पृथिवी को तुम धारे, क्या तव पुत्र कहाऊं ? ।
मुझसे अपना आप न संभले, यही देख घबराऊं ।।

नाम लिये भी जग ना माने, सौ विश्वास दिलाऊं ।
वेद-शास्त्र की देय दुहाई, मैं पीछा छुड़वाऊं ।।

—बुद्धदेव विद्यालंकार ।

प्रार्थना गीत— ८

प्रभु लीला है तेरी अपार, सुनाऊं कैसे भला ?

बैठे हैं चुपचाप सब जीभ वाले,
गूंगे रहे हैं पुकार । सुनाऊं.....
आंखें जिन्हें हैं न वे देख पाते,
अन्धे रहे हैं निहार । सुनाऊं.....
पाते न तेरा पता कान वाले,
बहरे सुनें बार-बार । सुनाऊं.....
भूले न अपने को, वे राह भूले,
भटके फिरें द्वार-द्वार । सुनाऊं.....
भोले-जिन्होंने खुदी को भुलाया,
पाया तुझे घेरघार । सुनाऊं.....
नहाये न जो नेह नदिया में तेरी,
वे हैं पड़े बीच धार । सुनाऊं.....
देखा अजब खेल—जो बीच डूबे,
वे हो गये पार-पार । सुनाऊं.....

—वागीश्वर विद्यालंकार ।

प्रार्थना गीत—६

दयाकर हे दयामय देव ! आओ,
सुभग इस दीन-कुटिया को बनाओ ।
कहाँ मैं नाथ ! दोनों हाथ खाली,
कहां तुम हो सकल सम्पत्तिशाली ।।
न आडम्बर बड़े मैं कर सकूंगा,
न भारी भेंट लाकर धर सकूंगा ।
न इसकी कुछ मुझे परवाह ही है,
तुम्हें भगवन्! न इसकी चाह ही है ।।
प्रभो अब कामना अन्तिम यही है,
मुझे हर आन व्याकुल कर रही है ।
हृदय अपना बना आसन बिछाऊं,
तुम्हें तब प्रेम से उस पर बिठाऊं ।।
वहां पर नेह का दीपक जलाऊं,
हुआ लव लीन मीठे गीत गाऊं ।
निरन्तर भक्ति के आंसू बहाऊं,
तुम्हारे पाद-पंकज यों धुलाऊं ।।
बना श्रद्धासुमन का हार लाऊं,
तुम्हारे कण्ठ में सादर पिन्हाऊं ।
कृपा कर अब कृपा के सिन्धु आओ,
सफल मेरे मनोरथ कर दिखाओ ।।

—वागीश्वर विद्यालंकार ।

प्रार्थना गीत—१०

मेघा बरस-बरस रस वारी ।
बून्द-बून्द पर तेरी जाऊं वार-बार बलिहारी । ध्रुव
नदी सरोवर सागर बरसे लागीं झरियां भारी ।
मोरे आंगन क्यों ना बरसे मैं क्या बात बिगारी ।
तू बरसे मैं जी भर न्हाऊं दोनों भुजा पसारी ।
नयन मून्दकर नाचूं गाऊं अपना आप बिसारी ।।

—बुद्धदेव विद्यालंकार ।

प्रार्थना गीत—११

प्रभु जी ! मेरे तुम ही एक आधार ।
दुःखविनाशक सुख के दाता सब के पालनहार ।
शरण गहूं प्रभु जाय कहां मैं कोउ न पूछनहार ।।
तेरा ही मन्त्र जपूं निशिवासर चरणन में सिर डार ।
परम कृपा कर दुखिया मुझ को अब तो लीजै उभार ।।
कर स्वीकार चरण में मेरा भक्ति भरा उपहार ।
दया करो प्रभु दीन हूं मैं तव द्वारे रहा हूं पुकार ।।

—प्रियव्रत विद्यालंकार ।

प्रार्थना गीत— १२

हे सत्स्वरूप ! सुधासलिल सुख का सदा बरसाइये।
हमको हटा कर असत् से सत् मार्ग शुभ दरसाइये।।

सूखे नहीं सन्ताप से मानस हमारा यह कभी।
हे मेघ ! मंगलमूलमय ! इस को सदा सरसाइये।।

जिस ज्योति से हे ज्योतिमय! जगदीश! जगमग है जगत्।
तम से बचा उस ओर हम को लाइये हुलसाइये।।

मदमोहमय रजनी घनी तुम ! ज्ञान भानु महान हो।
है चित्त-पंकज की कली मुकुलित इसे विकसाइये।।

हैं आप अजराऽमर सदा हमको बचा कर मृत्यु से।
अमरत्व का वर दीजिये भय मृत्यु का विनसाइये।।

निज धर्म का, निज जाति का, निज देश का अभिमान हो।
हे सर्वसद्गुणधाम ! हम में सुगुण आप बसाइये।।

हम परमपावन गोद में प्रभु ! आ रहे हैं आप की।
सिर पर हमारे पाणिपंकज प्रेममय परसाइये।।

—वागीश्वर विद्यालंकार।

प्रार्थना गीत—१३

पितु मातु सहायक स्वामि सखा
तुम ही इकनाथ हमारे हो ।।
जिनके कछु और अधार नहीं
तिनके तुम ही रखवारे हो ।।
प्रतिपाल करो सगरे जग को
अतिशय करुणा उर धारे हो ।।
भुलि हैं हम ही तुम को तुम तो
हमरी सुधि नाहि विसारे हो ।।
उपकारन को कछु अन्त नहीं
छिन ही छिन जो विसतारे हो ।।
महाराज ! महा महिमा तुम्हरी
समुझे विरले बुधवारे हो ।।
शुभ शान्ति-निकेतन प्रेमनिधे ।
मन-मन्दिर के उजियारे हो ।।
यहि जीवन के तुम जीवन हो,
इन प्राणन के तुम प्यारे हो ।।
तुम सों प्रभु पाय "प्रताप हरि"
किनके अब और सहारे हो ।।

—प्रतापनारायण मिश्र ।

प्रार्थना गीत—१४

तव वन्दन हे नाथ ! करें हम ।।

तव चरणन की छाया पाकर,
शीतल सुख उपभोग करें हम ।
भारत जननी की सेवा का,
व्रत भारी व्रत नाथ धरें हम ।
माता का दुःख हरने के हित,
न्योछावर निज प्राण करें हम ।
पाप-शैल को तोड़ गिरावें,
वेदाज्ञा इक शीष धरें हम ।
फूले गुरुकुल की फुलवारी,
विद्यामधु का पान करें हम ।
रागद्वेष को दूर भगा कर,
प्रेम-मन्त्र का जाप करें हम ।
सायं प्रातः तुझ को ध्यावें,
दुःख-सागर के पार तरें हम ।

—इन्द्र विद्यावाचस्पति ।

प्रार्थना गीत— १५

विनती यह हे नाथ हमारी, अन्धियारी मिट जावे सारी ।
स्नेहमयी अतिशय उजियारी, राह दिखावे ज्योति तुम्हारी।।

एक मन्त्र में दीक्षित होवें, भेद सभी अब देहिं विसारी ।
बने गुणी जन पद अनुगामी, कर पकरैं जिन लखैं दुखारी ।।

सत्सङ्गति हो सच्ची मति हो, कर्म होय सब जन उपकारी ।
सरस्वती की नवजीवन से खिली रहे यह नव फुलवारी ।।

तेज दण्ड में अजय हमारे, सदा रहे कल्मषसंहारी ।
सफल काम हों तव करुणा से ब्रह्मचर्य का व्रत अति भारी।।

तन मन धन सुख सब विसरावें, जन्मभूमि सुख सजै हमारी ।
दुःख हो सुख हो तुझे न भूलें, तू वत्सल भक्तन भयहारी ।।

—बुद्धदेव विद्यालंकार ।

प्रार्थना गीत—१६

नाम सुनते हैं तेरा रूप दिखाओ तो सही।
सूने मन्दिर में मेरे ज्योति जगाओ तो सही ।।

फूल में गन्ध, चमक चन्द्र में डाली तूने।
चाह जिनको है तेरी उन में समाओ तो सही।।

धूल मल मल के अलख द्वार पै जोगी गाते।
अपने गाने की कड़ी कोई सुनाओ तो सही ।।

चक्र में घूम चुका चरणों में तेरे आया।
दीन-वत्सल हो दयादृष्टि दिखाओ तो सही ।।

—'प्रियहंस'।

प्रार्थना गीत—१७

अंखियां उन दरसन की प्यासी।
देखन चाहत उन रसनिधि को निशि-दिन रहत उदासी
पात-पात में जिन की लीला भक्त-हृदय के वासी।
जिन के प्रेम-फन्द में फंस कर छूट जाय सब फांसी ।।

★

प्रार्थना गीत - १८

हृदय को हम सदा तेरे लिए तैयार करते हैं।
तुझे आनन्द सा सुख सा सदा हम प्यार करते हैं॥

तुझे हंसता हुआ देखें किसी दुखिया के मुखड़े पर।
इसी से सत्पुरुष प्रत्येक का उपकार करते हैं॥

बताते हैं पता तारे गगन में और उपवन में।
सुमन संकेत तेरी ओर बारम्बार करते हैं॥

अनोखी बात है तेरे निराले प्रेम-बन्धन में।
उलझकर भक्त उलझन से जगत को पार करते हैं॥

न होती आह तो तेरी दया का क्या पता होता।
इसी से दीन-जन दिन-रात हाहाकार करते हैं॥

हमें तू सींचने दे आंसुओं से पंथ जीवन का।
जगत के ताप का हम तो यही उपचार करते हैं॥

—रामनरेश त्रिपाठी।

प्रार्थनागीत—१६

तू ही है प्रभो, एक मेरा सहारा ।
न संसार में कोई साथी हमारा ।।

ये जीवन कमल-फूल मातंग व्याधी ।
आता निगलने को तूने उबारा ।।

लता-मंजरी फूलती जब तुम्हींने ।
खड़े व्योम में चन्द्र होकर निहारा ।।

सभी जीव जीवन-सुधा के हैं प्यासे ।
सदा जन्म लेकर तुम्हीं को पुकारा ।।

कृपा-दृष्टि से देव अब तो निहारो ।
दया का भिखारी है संसार सारा ।।

—'प्रियहंस'

प्रार्थना गीत--२०

अद्‌भुत महिमा जाल प्रभु का ।।

सार न इसका जाना जग ने,
बीता अनहद काल । प्रभु का···

आज नृपति जो कल वह बंदी,
लखपति हो कंगाल । प्रभु का···

चम-चम चमके भर-भर वरसे,
छिन में फटे घन-जाल । प्रभु का···

दिनकर चांद ग्रसे राहू ने,
उलझा जग जंजाल । प्रभु का···

याद करो निशदिन उस प्रभु को,
बीत रहा है काल । प्रभु का···

--इन्द्र विद्यावाचस्पति ।

प्रार्थना गीत--२१

अरूप भी सर्वरूप हो तुम,
स्वरूप अपना हमें दिखाओ ।
अनन्त पर्दे पड़े हुए हैं--
अनन्त हो तुम उन्हें उठाओ ।।

कभी हृदय-देश में विषैली,
खिलें कुटिल काम की लतायें ।
उन्हें झुलसते हुए दयामय,
निदाघ बन कर तुरन्त आओ ।।

कभी यदि क्रोध-वन्हि से तप्त,
तुच्छ मानस ये सूखता हो ।
तो नाथ पावस की मेघमाला,
बनो मधुर नेह-मेह लाओ ।।

महामलिन चित्त की नदी हो
कभी प्रभो लोभ-रूप रज से ।
विवेक से फिर विमल करे जो,
वही शरद-रूप तुम बनाओ ।।

खिले कहीं मोहमय कमल दल,
कहीं भ्रमर-मन भटक रहा हो ।
हे नाथ, हेमन्तरूप आओ,
समस्त कमलावली जलाओ ।।

प्रभुत्व पाकर क्षणिक तुम्हीं से,
भुला तुम्हीं को, मैं फूल जाऊं ।
बनो शिशिर-रूप, मानमद भय,
द्रुमावली-दल सकल उड़ाओ ।।

अशेष सौन्दर्य लुट गया हो,
उजाड़ बन सा बना हो जीवन ।
अमन्द-आनन्द-कन्द भगवन्,
वसन्त बन कर इसे खिलाओ ।।

—

प्रार्थना गीत —२२

तुम्हारी वीणा है अनमोल ।।
हे विराट जिसके दो तूम्बे,
है भूगोल खगोल । तुम्हारी · · ·

दया दण्ड पर न्यारे-न्यारे,
चमक रहे हैं प्यारे-प्यारे ।
कोटि गुणों के तार तुम्हारे,
खुली प्रलय की खोल । तुम्हारी · · ·

कोई हंसता है कोई रोता है,
जिसका जैसा मन होता है ।
सब कोई सुध-बुध खोता है,
क्या विचित्र है बोल । तुम्हारी · · ·

इसे बजाते हो तुम जब लौं,
नाचेंगे हम सब भी तब लौं ।
चलने दो न कहो कुछ कब लौं
यह क्रीड़ा कल्लोल । तुम्हारी · · ·

—मैथिली शरण गुप्त ।

प्रकाशक—
धर्मपाल विद्यालंकार,
स. मुख्याधिष्ठाता, कृते पुस्तक भण्डार,
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार ।

११०० प्रतियां,
भाद्रपद २०२४ (अगस्त १९६७),
मूल्य—४० पैसे ।

मुद्रक—
जी. आर. पाल,
मैनेजर : गुरुकुल कांगड़ी प्रिंटिंग प्रैस,
हरिद्वार (सहारनपुर) ।